गीता अध्याय २ श्लोक १६

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्त स्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ २-१६॥

भावार्थ व सामान्य अर्थ।.

अनित्य शरीर का चिरस्थायित्व नहीं है, और शाश्वत आत्मा का कभी अन्त नहीं होता है। तत्त्वदर्शियों द्वारा भी इन दोनों की प्रकृति के अध्ययन करने के पश्चात् निकाले गए निष्कर्ष के आधार पर इस की पुष्टि की गई है।

श्लोक की विस्तृत विवेचना

जब अर्जुन ने प्रभु से कहा, कि मुझे इस युद्ध में भाग नहीं लेना है, मैं इस युद्ध में अपने को अपने ही सम्माननीय अग्रजों और अपने ही भाइयों का वध करते नहीं देखना चाहता, वह भी केवल एक राज्य के लिए. आप मुझे संन्यास कि दीक्षा दे कर मुझे इस सब से मुक्त कर दीजिये.

अर्जुन, प्रभु कृष्ण के प्रिय सखा हैं, इसलिए प्रभु ने श्रेष्ठ ज्ञान देने का मन बनाया और सबसे गूढ़तम ज्ञान, सबसे पहले इस श्लोक के रूप में, उनके सम्मुख रखा. जब भी कोई श्रेष्ठ ज्ञानी, कुछ ज्ञान कि बात बताता है तो उसकी गहराई, श्रोता के ज्ञान कि गहराई से नहीं नापी जा सकती, बल्कि केवल वक्ता अथवा वाचक के ज्ञान कि गहराई से ही जानी जा सकती है. इसीलिए यह श्लोक गहनतम ज्ञान श्लोको में सबसे श्रेष्ठ और गहनतम माना और जाना जाता है.

इस श्लोक की विवेचना से पहले, हमको ज्ञान के उस स्तर को पहचानने अथवा जान लेने कि कोशिश करनी होगी, ताकि इस गहनतम श्लोक को समझने में कोई गलती या कोई कमी न रह

जाए. यह असंम्भव है कि उस स्तर का ज्ञान हमको आ जाए, लेकिन हमको कोशिश पूरी दृढ़ता और एकाग्रता से करनी होगी.

सृष्टि में जो भी निर्माण होता है, उसके दो ही आधार है, एक आधार है, कि वह निर्माण किस वस्तु अथवा सामग्री से होगा, और दूसरा कि निर्माण कौन करेगा अर्थात निर्माता कौन होगा . बिना सामग्री के निर्माण नहीं हो सकता और निर्माता के बिना भी निर्माण नहीं हो सकता. अर्थात दोनों का एक साथ उपस्थित होना आवश्यक है, तभी कोई निर्माण संभव है .

प्रकृति में जड़ वस्तुओं का निर्माण प्राकृतिक रूप से कालांतर में होता है, जैसे पत्थर, पर्वत, झील, सागर आदि, पंच महाभूतों के गुणों के कारण, यह निर्माण सतत चलता रहता है और इसमें केवल पंच महाभूतों का होना ही पर्याप्त है, किसी विशेष निर्माता की उपस्थिति की आवश्यकता नहीं पड़ती. जैसे जल सतत इक्कठा होता रहे, तो झीलों, सागरों और महासागरों का निर्माण हो जाता है, इसके लिए जल के अलावा किसी और तत्त्व कि आवश्यकता नहीं होती.

लेकिन यदि किसी विशेष निर्माण की आवश्यकता पड़े तो, उस स्तिथि में निर्माण सामग्री और निर्माता, दोनों की आवशयकता होती है.

वस्तु, निर्माता और सृष्टि को सत व् असत रूप में समझने हेतु, इस के स्वरुप, गुण और विवेक का बहुत गहनता से अध्ययन करना होगा . विवेक का अर्थ है, सत और असत दोनों में अंतर कर सकने और अंतर समझने का ज्ञान .

ईश्वर ने कठोपनिषद, केनोपनिषद, छान्दोग्य उपनिषद, और गीता आदि में विशेष रूप से इस सृष्टि के निर्माण, निर्माता, ज्ञाता और भोक्ता को बहुत गूढ़ रूप से समझाया हुआ है.

उपरोक्त मन्त्र का अध्ययन करने के पश्चात, सृष्टि, सत, असत का बहुत अच्छे से भान और ज्ञान हो जाता है. यदि यह विवेक हो गया अथवा आ गया, अथवा जान लिया गया, तो यह निश्चित हो जाता है कि ईश्वर के गहनतम गूढ़ ज्ञान क्षेत्र में आपका प्रवेश हो चुका है.

सोऽकामयत् एकोऽम् बहुस्याम् " , "तदेच्छत बहुस्याम" छान्दोग्य उपनिषद , यह जगत, ईश्वर की इच्छा से उत्पन्न होने के कारण, उनके अंदर ही है, उनका ही अंश है, जैसे हमारे स्वप्न, हमारे अंदर ही होते हैं, शरीर से बहार नहीं होते या आते, स्वप्न का संसार, हमारे ही अंदर होता है, और हमारे जागने पर हमारे अंदर ही लय हो जाता है, लगभग वैसा ही सम्बन्ध ईश्वर और जगत का है. हमारा मन, हमारे स्वप्न के जगत का निर्माण, बिना किसी वस्तु और सामग्री के करता है, और उसी तरह माया भी ईश्वर से प्रेरित हो कर, ईश्वर की इच्छा से पूरी सृष्टि का निर्माण करती है. जो भी शरीर हैं, उनका निर्माण ईश्वर, अपनी इच्छा से माया (निर्माण वस्तु) से करते हैं. जैसे हम अपने सपनो में पूरी तरह व्यापत होते हैं, सब कुछ हम ही होते है, कुछ भी बहार से नहीं लाया जा सकता, इस लिए, सब कुछ अर्थात स्वप्न में जितने भी शरीर आदि दिखाई पड़ते हैं, वह सब हम ही होते हैं हमारे अंश से ही बना होता है, ठीक वैसे ही सारे जगत में ईश्वर व्याप्त है, सर्वव्यापक है.

एक बालक को अपनी इच्छा या कल्पना में जो भी सजीव शरीर दिखाई पड़ते हैं, जैसे कि, उसने सोचा कि एक खरगोश अपनी जान बचाने के लिए, जंगल में पेड़ो और पत्थरों के बीच से भागा भागा जा रहा है और एक भेड़िया उसे पकड़ने के लिए उस खरगोश का पीछा कर रहा है. इतने में वह बालक स्वयं, अपनी कल्पना में, वहां पहुंच कर उस भेड़िये को उसकी पूछ से पकड़ कर दूर फेंक देता है, और खरगोश को बचा लेता है.

अब यहां पर ध्यान देने की बात यह है कि, क्या सच में, खरगोश और भेड़िया दोनों जीवित थे? क्या पत्थर माटी आदि जो जड़ होते हैं, वह जड़ ही थे. क्या खरगोश और भेड़िया को जीवित माना जा सकता है? क्या पत्थर माटी आदि, जो बालक की कल्पना में थे, वह वहां कहाँ से आये?

इसका उत्तर है, वह सब बालक की कल्पना में ही थे और बालक के मन ने, बालक की कल्पना अनुसार उनको बना दिया अथवा उनका निर्माण कर दिया. वह सब केवल बालक का ही हिस्सा है. एक ऐसा हिस्सा जो बालक का हिस्सा होते हुए भी उसका हिस्सा नहीं है, अर्थात बालक तो सत रूप है लेकिन कल्पना में जो भी है वह सब बालक का ही असत अंश है. उस कल्पना में केवल बालक ही है. जो जड़ है, जो भी सजीव शरीर हैं, और जो वहां अनंत आकाश है, वह भी केवल बालक का असत रूप ही है. जो भी वहां सजीव है, वे बालक के चेतन अंश के ही अंशधर हैं, इसलिए खरगोश और भेड़िया कल्पना में सजीव हैं, और पत्थर आदि जड़. जो भी जड़ या चेतन हैं, दोनों ही उस बालक का असत अंश रूप हैं. इस तरह से वह बालक, अपने काल्पनिक जगत का निमित्त व उपादान कारण है.

जैसे हमारे स्वप्न में कोई भी हमको वास्तविक रूप में नहीं देख सकता, कोई नहीं जान सकता की हम कौन हैं, कैसे दिखते हैं? क्योंकि उसे पहले हमारे स्वप्न से बाहर आ कर साकार रूप लेना होगा, ताकि

हमको देख सके, और यह असंम्भव है, कि कल्पना अथवा स्वप्न में से कोई पात्र बाहर आ सके. ठीक उसी तरह, इस जगत में ईश्वर को भी कोई नहीं जान सकता. यदि हम इस ज्ञान को समझ लें, कि सृष्टि ईश्वर की कल्पना अथवा इच्छा में निर्मित है, और इसलिए हम सब जीव (चेतन) और हमारा शरीर (स्थूल) ईश्वर का ही अंश हैं, और सब सामान रूप से बराबर के अंश हैं, ईश्वर को जान पाने अथवा समझने में थोड़ी सुविधा होती है.

स्वप्न में जो बाकी देह दिखलाई पड़ती हैं, उसे विभिन्न अंश अथवा विभिन्नांश कहते हैं, और जब हम स्वयं को स्वप्न में देखते हैं, उसे स्वयं अंश अथवा स्वांश कहते हैं. अर्थात जो खरगोश, भेड़िया आदि हैं वह बालक के विभिन्नांश रूप हैं और जो स्वयं कल्पना के अंदर का बालक, जिसने भेड़िये को पूँछ से उठा कर दूर फेंक दिया, वह बालक का स्वांश है. पूरी कल्पना की सृष्टि में, वह स्वांश बालक ही सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है . जैसे ही बालक सोचना बंद कर देगा, वैसे ही वह सब बालक के मन में विलीन हो जायेगी, कहीं बाहर स्थापित नहीं होगी .

ठीक वैसे ही यह सृष्टि भी, ईश्वर के इच्छा, व ध्यान में ही बनी है या प्रकट हुई है और ईश्वर अपने इच्छा में पूरी तरह व्याप्त है, सृष्टि ईश्वर ही सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ , कर्तुम अकर्तुम और अन्यथा कर्तुम समर्थ हैं. जो कुछ भी निर्मित होगा, ईश्वर माया रुपी तत्त्व से, अपनी इच्छा में बना देगा और जब ईश्वर अपनी इच्छा बंद करेंगे, यह सारा सृष्टि उनकी इच्छा में ही विलीन हो कर ईश्वर में ही समा जायेगी. इस ज्ञान को समझ कर ध्यान में रख, अब गीता के मंत्र का अध्ययन करते हैं .

इस मंत्र के प्रथम भाग का अर्थ है, जो असत विद्यमान है, उसका अस्तित्व ही नहीं है, और जो भी विदित हो रहा है, या विद्यमान है, उसमें सत का बिलकुल भी अभाव नहीं है.

इस सृष्टि में जो भी है, वह काल से बंधा है और लगातार परिवर्तन को प्राप्त हो रहा है, लगातार निर्मित और नष्ट हो रहा है, और असत की परिभाषा के अनुसार जो भी निर्मित, परिवर्तनीय, और समाप्त हो रहा है, वह असत है. इस कारण यह सम्पूर्ण सृष्टि असत रूप ही है. जो अपरिवर्तनीय है, वह इस सृष्टि का द्दष्टा है, जिसकी इच्छा के अंदर इस सृष्टि का निर्माण हुआ है और वह (ईश्वर अथवा द्दष्टा) इस पूरी सृष्टि में सामान रूप से व्याप्त है और अपरिवर्तित है, इस लिए वह सत भी इस सृष्टि में पूरी तरह विद्यमान है और उसका कहीं भी अभाव नहीं है.

एक दृष्टान्त है, एक बार एक बालक सागर के किनारे टहल रहा था, उसके परिवार के किसी भी सदस्य ने सागर कभी नहीं देखा था, उसे सागर बहुत मनमोहक लगा, और उससे भी ज़्यादा उसे सागर की लहरें उसको बहुत अच्छी लग रही थी. उसने सोचा की एक बाल्टी में लहर को भर कर अपने घर ले जाए और अपनी माता को दिखाए कि, देखो लहर कितनी सुन्दर और चंचल होती है. वह जब भी लहर को अपनी बाल्टी में भरता तो बाल्टी में केवल जल ही आता, लहर नहीं. अब उस बालक को क्या बताये कि, लहर जो सागर में वायु आदि की गतिविधि से उत्पन्न हुई है, दिखाई दे रही है, जो बहुत गर्जना कर रही है, जो बहुत शक्ति से किनारे की चट्टानों को मार रही है, वह केवल जल ही है, लहर विद्यमान है, पूरी तरह विदित हो रही है, लेकिन उसका अस्तित्व सत्य नहीं है, यह मान लो की वह है ही नहीं या असत है, सत्य तो केवल जल है. जब भी किसी असत वस्तु को पकड़ने जाओगे, वह कभी हाथ नहीं आएगी, केवल सत्य ही सनातन रूप से रहता है.

एक और कथा है, एक व्यापारी देश विदेश में अपने अनाज और मसालों के लिए बहुत प्रसिद्ध था. उसके कई पानी के जहाज, दिन रात केवल माल आयत निर्यात के लिए ही लगे रहते थे. काल ने करवट बदली और व्यापरी के कई जहाज तूफ़ान में घिर कर डूब गए, और कई जहाज युद्धों के कारण क्षतिग्रस्त हो गए और कुछ जो बचे खुचे थे लुटेरों ने लूट लिया. व्यापारी का व्यापार पूरी तरह नष्ट हो गया, उसने अपनी बची कुछ धन सम्पदा, भूमि, भवन बेच कर देनदारों का क़र्ज़ चुकाया और अपने बचे खुचे सामान को ले कर, कहीं दूर देश जाने का मन बना लिया ताकि वह सभी से अपने को छिपा सके और यदि मौका मिले तो कुछ नया काम भी शुरू कर दे.
नए शहर में, उसका एक बहुत पुराना मित्र रहता था, उसने उस व्यापारी के रहने की व्यवस्था कर दी, और व्यापारी के लिए, बंदरगाह में एक काम भी ढून्ढ लिया. धीरे धीरे व्यापारी का घर का खर्चा चलता रहा और उसे भी हिम्मत आने लगी. एक दिन उसे पता चला की एक बुजुर्ग व्यापारी अपना व्यापार बंद करना चाहता है, और अपने पुराने जहाज बहुत काम दामों में बेच रहा है. कोई भी व्यापारी नहीं इच्छुक था उन पुराने जहाजों को खरीदने के लिए. उस व्यापारी ने अपनी पत्नी को यह बात बतायी और कहा, यदि ईश्वर सहायता करें, तो में दोबारा व्यापार शुरू करना चाहता हूँ, वो, बुजुर्ग व्यापारी, जहाज बहुत ही कम दाम में बेच रहा है. उसकी पत्नी ने कहा कि हमारे पास घर में जो गणेश भगवान्, उनके वहां मूषक और भोजन मोदक हैं, वह सब विशुद्ध स्वर्ण के बने हैं. आप चाहो तो उनको कुछ दिनों के लिए गिरवी रखवा कर, उस धन

से जहाज खरीद लो, यदि ईश्वर चाहेंगे तो व्यापार में लाभ होगा और हम प्रभु को वापस ले आएंगे.

यह बात व्यापारी को बहुत भली लगी, उसने अपने मित्र को अपने मन की बात बताई और पूछा कि किसी सेठ से मिलवा दो, और प्रभु कि स्वर्ण प्रतिमाओं के बदले कुछ धन दिलवा दो. मित्र ने बोला कि, इस नगर में कोई गिरवी नहीं रखता, यह यहां मना है, लेकिन तुम चाहो तो मैं इनको खरीद लूँगा और इनको दो माह तक नष्ट नहीं करूंगा. यदि आप चाहो दो माह के भीतर मुझसे इनको खरीद सकते हो, लेकिन स्वर्ण के दाम उस दिन वाले होंगे. व्यापरी मान गया. मित्र ने सभी का भारोत्तोलन किया और कहा कि गणेश जी कि मूर्ती 1 किलो कि है, और मूषक व् मोदक दोनों मिला कर 1 किलो के हैं, और यह कह कर मित्र ने 2 किलो स्वर्ण के दाम व्यापारी को पकड़ाए. व्यापारी बोला मित्र. यह गणेश जी का मूल्य, मूषक और मोदक के मूल्य के बराबर कैसे हो सकता है, मित्र बोला भाई में गणेश जी और मूषक आदि को नहीं खरीद रहा, में तो स्वर्ण ही खरीद रहा हूँ, आप चाहो तो स्वर्ण से गणेश जी को निकाल लो, और मुझे स्वर्ण देदो, यह कह कर मित्र ने गणेश जी कि स्वर्ण प्रतिमा व्यापारी के सम्मुख रख दी. व्यापारी सोच में पड़ गया, सत्य यही है कि यह केवल स्वर्ण ही स्वर्ण है, गणेश जी, मूषक और मोदक तो कलाकार ने अपनी कल्पना, ज्ञान और कौशल से बनाये है, वह इस स्वर्ण में दिख तो रहे हैं, हम उनको छू भी सकते हैं, उनकी पूजा भी कर सकते हैं, लेकिन असल में केवल स्वर्ण ही सत्य है, और यह आकार अस्त है. व्यापारी उठा और मित्र को नमस्कार कर, धन ले कर वहाँ से चला गया.

इस तरह यह संसार और इस संसार में जो भी जड़ और सजीव शरीर हमको दिख रहे हैं, हम उनसे व्यवहार (देखना, बात करना, पकड़ना, आदि) भी कर रहे हैं, लेकिन सत्य तो यह है कि केवल पंच महाभूत ही सत्य है, बाकी सब उन महाभूतों से बने हैं, और जो जीव है वह अन्तर चातुष्ठय के तत्त्व, बुद्धि में पड़ा प्रतिबिम्ब मात्र है, जो सजीव शरीर को सजीव होने का भान देता है. प्रकृति के पंच महाभूत, इस सृष्टि का उपादान कारण है और ईश्वर इस सृष्टि का निर्माता या निमित्त कारण. जहां जहां भी सृष्टि है और जहां जहां भी सजीव शरीर हैं, केवल यही दो तत्त्व इस अनंत संसार में है.

छान्दोग्य उपनिषद में, ऋषि उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को ब्रह्मविद्या की शिक्षा दी, वही विद्या इस मन्त्र में छिपी हुई है.

ऋषि ने श्वेतकेतु को समझाया :-
एक लोहे के टुकड़े से खुरपी, दंराती, बाल्टी आदि बना सकते हैं, और फिर दोबारा उस खुरपी आदि को गला कर लुहार तलवार, भाला आदि बना देता है, फिर जब उस तलवार आदि का कार्य ख़तम हो जाता है तो वह उसे गला कर बल्लम, छैनी बना देता है. लुहार लोहे को अनंत तरह की वस्तुओं में बनाता और बिगाड़ता रहता है, जो भी उसकी ज़रूरत के अनुसार हो . लोहा और लुहार नहीं बदलते, केवल वस्तु या निर्माण ही बदलता रहता है. यदि तुमको लोहे का ज्ञान है, तो बाकी किसी निर्मित वस्तु के ज्ञान की कोई ज़रूरत नहीं रह जाती, ना ही कोई लोहे द्वारा निर्मित वस्तु तुमसे अनजान है, क्योंकि सत्य तो लोहा है, वस्तु तो निमिष मात्र को दिखलाई पड़ती है

माटी से कुम्हार कई तरह की वस्तुऐं बनाता है. उन सभी में केवल माटी ही सत्य है, यदि आपको माटी का ज्ञान है तो वस्तुओं के ज्ञान की कोई ज़रूरत नहीं रह जाती या अनंत तरह की वस्तुऐं निमिष मात्र और सत्य, केवल माटी ही दिखाई देगी.

अब यहां पर दो सत्य हैं, पहला सत्य, माटी, और दूसरा कुम्हार, ये जो माटी है, जिससे अनंत वस्तुओं का निर्माण होता है, और उन वस्तुओं में सिवाय माटी के कुछ और नहीं होगा, इस तरह माटी उपादान कारण कहलायेंगे, उसे "उपादान कारण" कहते हैं. और जो कुम्हार है, जो निर्माण कर रहा है, उसे "निमित्त कारण" कहते हैं.

उपादान कारण, केवल जड़ वस्तु होती है, जैसे लोहा, ताम्बा, स्वर्ण, काष्ठ, पत्थर, माटी आदि, और यह सब वस्तुऐं माटी, जल, अग्नि, वायु, और आकाश से ही मिल कर बनी होती है. जड़ वस्तु कुछ नहीं कर सकती, उसमे न तो ज्ञान होता है, ना ही वह कुछ कार्य कर सकती है, ना ही उसमे किसी तरह की इच्छा या चेष्ठा होती है. लेकिन जो भी निर्माण होता है, उसमे केवल वही उपादान कारण तत्त्व ही विद्यमान होता है. विद्यमान अर्थात जिसे हम महसूस, देख, सुन, स्वाद और गंध ले सकते है.

जो कुम्हार है उसे "निमित्त कारण" कहते हैं, निमित्त कारण का कोई भी अंश उस निर्मित वस्तु में नहीं होता, इसलिए निर्मित वस्तु से निर्माता कौन है, नहीं पता लग सकता, लेकिन यह स्वतः सिद्ध होता है कि कोई निर्माता है, तभी यह निर्माण हुआ है.

किसी भी वस्तु या देह या सृष्टि के निर्माण का ज्ञान, केवल निमित्त कारण के पास ही होता है, निमित्त कारण को भी तीन अनिवार्यता या शर्त होती है .

पहला उसके पास उस कार्य या निर्माण करने का पूर्ण ज्ञान का होना जरूरी है,
दूसरा उसके पास उस कार्य को करने की इच्छा होनी चाहिए और

तीसरा उसके पास उस निर्माण करने के का कर्म होना भी जरूरी है, अर्थात निमित्त कारण, निर्माण करने का कर्म भी करेगा .

यदि इन तीनो में से कोई एक तत्व भी कम हुआ तो निर्माण का होना असंभव है .

उदाहरणार्थ :- यदि किसी व्यक्ति को घट या घड़ा बनाना है,   तो उसे उसके निर्माण का पूरा ज्ञान होना जरूरी है, (उचित माटी का ज्ञान, कहाँ मिलेगी, प्राप्ति कैसे होगी, घट बना कर कहाँ सुखाएगा आदि)
यदि उसे ज्ञान नहीं है, लेकिन वह इच्छा करता और बिना ज्ञान प्राप्त किये कर्म भी करता है, तो भी घड़ा नहीं बन सकता .
यदि किसी व्यक्ति के पास ज्ञान हो और वह कर्म भी करने की क्षमता हो, लेकिन उसकी इच्छा नहीं है, तो भी घड़ा नहीं बन सकता.
यदि किसी व्यक्ति के पास ज्ञान हो और उसकी इच्छा भी हो कि एक घड़ा बनाऊं, लेकिन वह घड़े के निर्माण का कार्य न करे तो भी घड़ा नहीं बन सकता .

निर्माण कार्य के लिए, निमित्त कारण द्वारा प्रयोग वस्तुओं आदि को, सहायक निमित्त कारण कहते हैं.
प्रस्तुत उदहारण (कुम्हार व् घट) में, निमित्त कारण, चाक, छड़ी जिससे चाक घुमाते हैं, महीन रज्जु, जिससे घट को चाक से अलग करते हैं, धुरी जिस पर चाक रखा जाता है, अग्नि, आदि, सभी सहायक

निमित्त कारण कहलाये जाएंगे, कुछ स्थानों में इन्हे देव (निर्माण में सहायक) भी कहा गया है और इनका लेश मात्र अंश भी निर्मित वस्तु में अंशभागी नहीं होता.

इन सभी सहायक निमित्त कारण, का निर्माण भी निमित्त कारण ही करता है और उनके निर्माण में भी उपादान कारण, प्रकृति ही होती है, और उनकी सहायता से निमित्त कारण, या कुम्हार लगातार घट आदि बनाता रहता है .

अग्नि भट्टी, जिसमे घट पकते हैं, किसी भी घट का निर्माण नहीं करती और ना ही कर सकती है, भट्टी केवल निमित्त कारण द्वारा निर्मित घट को पुष्ट करने में मदद करती है, और वह भी सहायक निमित्त कारण ही है.

हर निर्माण की यही विधि है. कोई निर्माण हु आ है, तो निमित्त कारण, सहायक निमित्त कारण और उपादान कारण, सभी की उपस्थिति और सभी अनिवार्य रीतियों व् अवस्थाओं का होना स्वतः ही ज्ञान हो जाना चाहिए. अर्थात यह सभी उपस्थित थे, तभी निर्माण भी हु आ है, यह सहज सामान्य ज्ञान है, इस ज्ञान में कोई विशेष बुद्धिमत्ता या तर्क या अनुभव की आवशयकत नहीं है, केवल जानकारी का होना ही काफी है.

सांसारिक अवस्था में या सृष्टिमें, कोई प्रज्ञावान व्यक्ति एक घट खरीदे, तो उसे पूरा ज्ञान, अहसास होता है कि यह घट माटी से बना है, किसी कुम्हार ने इसे चाक पर बनाया है, फिर धूप में सुखाया है, फिर भट्टी में तपाया है, फिर किसी व्यापारी को बेचा है, फिर वह व्यापारी से वह व्यक्ति स्वयं खरीद रहा है. इस तरह उस व्यक्ति को चारों स्वामियों का ज्ञान होता है.

प्रथम स्वामी :- यह घट किससे बना है? यह घट माटी से बना है, इसलिए यह घट माटी का है. पदार्थ अथवा सामग्री.
द्वितीय स्वामी:- घट किसने बनाया है? यह घट कुम्हार ने बनाया है, इसलिए यह घट कुम्हार का है. निर्माता.
तृतीया स्वामी:- यह घट किसने खरीदा है? यह घट व्यापारी ने खरीदा है, यह घट व्यापारी का है. वितरण अथवा व्यापार अथवा विक्रय कर्ता.
चतुर्थ स्वामी:- यह घट अब किसने लिया ? यह घट ग्राहक ने खरीदा है. यह घट ग्राहक का है. खरीददार, भोक्ता अथवा उपयोग करने वाला.

जब यह घट नष्ट हो जाएगा, केवल माटी ही बचेगी. घट का निर्माण हुआ है, इसलिए वह असत है और वह नष्ट भी होगा, नष्ट हो कर पुनः माटी का रूप ले लगा, जैसे एक सागर कि लहर बनती है, फिर नष्ट हो कर पुनः सागर में मिल जाती है और पुनः पुनः नयी लहर बनती और लय होती रहती है. कुम्हार, व्यापारी और ग्राहक, घट और माटी से अलग रहेंगे और घट के होने का, घट को पहचानने का और घट का, आनंद उठाते रहेंगे.

इस तरह माटी और घट दोनों जड़ हैं, माटी प्रकृति है, उपादान कारण है, और घट उस आकार का नाम है, जिसका निर्माण हुआ है, घट निर्मित हुआ है. इस तरह से यह सिद्ध हुआ कि नाम और रूप, जड़ प्रकृति के अंश हैं, अर्थात जो भी इस सृस्टि में निर्मित है उसका एक नाम है और वह नाम उसके रूप को इंगित करता है, या उस नाम से एक रूप जुड़ा हुआ है. जैसे यदि लोटा बोलेंगे तो, लोटे के आकार कि वस्तु का ज्ञान होता है. अर्थात नाम से नामी का पता चलता है.
चेतन सृष्टि में देखें तो

(१) घट को देखने वाला कि, यह एक आकार है.

(२) घट को जानने वाला कि, यही घट है या इस आकार को घट कहते हैं.

(३) घट को लेने वाला, अर्थात इस घट के उपयोग का आनंद लेने वाला.

यह तीनो चेतन तत्व के अंश है. चेतन तत्त्व ही ज्ञानमय है, उसी को ज्ञान होता है और उसी के पास ज्ञान है, यह अस्ति भाति और प्रिय कहलाते हैं, अर्थात अस्ति, जिसे पता है कि यह घट है, भाति, जिसे पता है घट ऐसा दीखता है, प्रिय, जो घट का प्रयोग कर आनंदित हो रहा है, तीनो चेतन तत्व है .

इसी तरह सृष्टि की रचना का भी निमित्त कारण और उपादान कारण हैं.
"तदैव इच्छित बहुस्याम" अर्थात ईश्वर ने इच्छा की, मैं कि बहुत हो जाऊं, और ईश्वर स्वयं पूरी सृष्टि का रूप बन गए. अर्थात इस सृष्टि का निर्माण ईश्वर की इच्छा से, इच्छा में हो गया या कल्पना की और सृष्टि का निर्माण हो गया.

यह सारी सृष्टि केवल ईश्वर कि इच्छा में स्थित है और जो कुछ भी इस सृष्टि में निर्माण हुआ है, वह सब ईश्वर की मायारूपी इच्छा से ही निर्मित हुआ है. अर्थात इस सम्पूर्ण सृष्टि में, यह जो कुछ भी स्थित है वह सब केवल माया का ही कार्य है, जैसे घट माटी का कार्य है, घट में माटी के सिवाय और कुछ भी नहीं है. यहां माया ही सर्वव्यापी है, सिवाय माया के और कुछ भी नहीं है. प्रकृति भी माया है और पंच महाभूत, जिससे सारी सृष्टि और देह निर्मित हैं वह भी केवल माया के कार्य हैं.

यह सृष्टि, ईश्वर की इच्छा या कल्पना में स्थित होने के कारण, केवल ईश्वर ही पूर्ण रूप से इस सृष्टि में व्याप्त हैं, यहां ईश्वर के सिवाय और कुछ नहीं है.

इसी कारण ईश्वर को सृष्टि का निमित्तो उपादान कारण कहा जाता है, सृष्टि उनकी कल्पना में है इस लिए असत है और ईश्वर की इच्छा में होने के कारण, ईश्वर का अभिन्न अंग है इसलिए सत भी है. जीव, जो शरीर में प्रविस्टी के कारण, इस माया से घिरा है, वह माया का भोक्ता मात्र है, वह न माया में है और ना ही ईश्वर में.

***नासतो विद्यते भावो,* अब इस श्लोक के इस खंड का विश्लेषण करते हैं. सामान्य भावार्थ और शब्दार्थ में, इसका अर्थ है नासतो विद्यते भावो, "यह जो असत है, जो कि भी विदित हो रहा है, वह है ही नहीं.**

विदित कर अर्थ है जो विद्यमान है और हम उसे श्रवण, रस, रूप, स्पर्श, गंध ले सकते हैं, वही विद्यमान है और उस वस्तु कि उपस्थिति हमको विदित होती है.

एक बार मुखिया ने अपने घर में भजन कीर्तन का कार्यकर्म रखा हुआ था, एक बच्चा वहाँ से गुजरा, तो आगे जा कर एक व्यक्ति ने उससे पुछा, क्या वहाँ कोई पूजा आदि हो रही है. बच्चे ने बोला, दिखा और सुनाई तो नहीं दिया, लेकिन अगरबत्ती की बहुत अच्छी सुगंध आ रही थी, शायद पूजा होने वाली होगी. अर्थात बच्चे को सुगंध कि विद्यमानता से विदित हो गया कि वहां अगरबत्ती जलाई हुई थी.

एक बार एक बच्चे का अपहरण हो गया, लेकिन अपहरणकर्ताओं को लगा कि गलत बच्चे लो उठा लाये हैं, तो उन्होंने बच्चे को आखें बंद कर एक अनजान जगह छोड़ दिया. जब पुलिस को पता चला तो वह बच्चे को उसके घर ले आये. बच्चे से पूछा कि उसे कहाँ बंद किया हुआ था? बच्चे ने बताया कि उसकी आखों में पट्टी

बाँधी हुई थी लेकिन वहाँ एक मंदिर के बड़े घंटे कि आवाज आती थी और गुरबाणी कि भी आवाज आती थी. इसलिए एक बड़ा मंदिर और बड़ा गुरुद्वारा नज़दीक ही था. अर्थात बच्चे को घंटे कि आवाज़ सुन कर और गुरबाणी सुन कर मंदिर और गुरूद्वारे के नज़दीक विद्यमान होना विदित हो गया.

इस तरह हम अपनी ज्ञानिन्द्रियों से किसी के भी विद्यमान होने को विदित करते हैं. मन से कुछ भी विदित नहीं होता, केवल इन्द्रियों से विद्यमानता सिद्ध होती है.

यहां ईश्वर कहते हैं, कि यह जो भी विदित हो रहा है, वह है ही नहीं. भव का अर्थ है होना. यह का अर्थ है जो भी सृष्टि में विद्यमान है और इन्द्रियों से विदित हो रही है. इन्द्रियां केवल अपने विषयों को ही ग्रहण करती हैं. जैसे कान केवल ध्वनि सुन सकते हैं. ध्वनि जड़ वस्तुओं के घर्षण, टकराहट, हिलने डुलने, आदि से ही उत्पन्न होती है. आखें केवल रूपों को देख सकती है, जो भी इस सृष्टि में विद्यमान शरीर हैं, सूर्य की उपस्थिति में उन रूपों को देख सकती हैं, अन्धकार में वह कुछ नहीं कर सकती. इसी तरह अन्य इन्द्रियां भी अपने अपने विषय को ही ग्रहण करती हैं. इसी तरह रसना इंद्री से रस अथवा स्वाद का पता चल जाता है, कि कोई भोजन कितना मीठा है, वह कैसा मीठा है, मीठापन चीनी का है अथवा गुड़ का है. आम का मीठापन है या केले का मीठापन है. आदि सभी तरह के रस से, खाद्य पदार्थ में उन पदार्थों के विद्यमान होना विदित होता है.

अर्थात यह सृष्टि और जो भी शरीर हैं, जड़ या सजीव शरीर, जिसका उपादान कारण पांच महाभूत हैं, इन इन्द्रियों से, जो पांच महाभूतों के मलिन सतगुण अंश से बनी हैं, उसीको ग्रहण कर सकती हैं.

इसी तरह जो सजीव शरीर, जो भी विद्यमान है, हमारे सम्मुख हैं, वह सजीव शरीर इसलिए सजीव हैं, क्योंकि ईश्वर का चेतन अंश इन शरीरों में प्रतिबिंबित हो कर, इनको चेतन दिखा रहा है. जिस तरह प्रतिबिम्ब असत होता, ठीक वैसे ही, शरीरों में प्रतिबिंबित चेतन अंश भी, सत रूप नहीं है, ईश्वर का असत अंश है. यह ठीक वैसे ही हैं, जैसे उस बालक को अपनी कल्पना में खरगोश और भेड़िया सजीव लगे थे, लेकिन सत रूप से, वे थे ही नहीं.

नाभावो विद्यते सतः अब श्लोक के इस खंड का विश्लेषण व अध्ययन करते हैं.

इस श्लोक का अर्थ है कि जो भी विद्यमान है, उसमे सत का कोई आभाव नहीं है. सत का अर्थ है ईश्वर. "सत्यं ज्ञानं अनंतं ब्रह्मः" यह जो भी विद्यमान है, अर्थात सम्पूर्ण सृष्टि इसमें

सत का कोई अभाव नहीं है. यह केवल सत रूप ईश्वर ही है. अभाव का अर्थ है न होना, जैसे कोई एक घट आधा जल से भरा हुआ है, और बाकी आधा खाली, तो जो आधा खाली है, उसे कहते हैं कि वहाँ जल का अभाव है, अर्थात है ही नहीं.

यह सृष्टि ईश्वर कि इच्छा से, इच्छा में निर्मित है, अर्थात ईश्वर इच्छा करते हैं, और सृष्टि का निर्माण, स्थापत्य, पालना और संहार होता है. यह सृष्टि ठीक वैसे ही निर्मित है, जैसे उस बालक कि कल्पना में वह जंगल, पत्थर, खरगोश व भेड़िया आदि थे. अपनी इच्छा अथवा कल्पना अथवा स्वप्न में सिवाय बालक के और कोई हो ही नहीं सकता. अर्थात बालक ही उसका उपादान कारण है और बालक ही उसका निमित कारण और बालक ही स्वप्न में उपस्थित या निर्मित उन सभी चेतन शरीरों की चेतना भी है. वहां कोई अन्य चेतना नहीं है, जो भी चेतना है, वह बालक की ही है और उसी बालक का चेतन अंश है. अर्थात वहाँ केवल बालक ही उपस्थित है और सारी उस कल्पना में जो सृष्टि है वह केवल बालक ही है.

ठीक इसी तरह, इस सृष्टि में, जो कुछ भी है, केवल ईश्वर ही सर्वव्यापक है और सिवाय ईश्वर के यहां और कुछ नहीं है.

सृष्टि ईश्वर की इच्छा के अंदर है, इच्छा में जो भी होता है, वह असत ही होता है, उसमें सत नहीं होता. इसलिए यह सृष्टि ईश्वर का असत रूप ही है, और ईश्वर के अंश होने के कारण, ईश्वर के अंदर होने के कारण, इस सृष्टि में सत (ईश्वर) का भी कोई आभाव नहीं है. यह सृष्टि पूर्णरूप से ईश्वर का ही अंश है और ईश्वर ही है.

यह सृष्टि सजीव शरीरों सहित, ईश्वर की इच्छा से निर्मित होने के कारण, असत है और इसका कोई सत रूप से अस्तित्व ही नहीं है, और ईश्वर का ही अंश होने के कारण, इसमें सत अर्थात ईश्वर का कोई अभाव नहीं है.

तत्त्व ज्ञानी, अर्थात ईश्वर का ज्ञान रखने वाले महामानव, पूरी सृष्टि को इसी तरह देखते हैं, कि जो भी सृष्टि में जड़ या चेतन है, वह सब ईश्वर द्वारा, जडमाया से निर्मित है और यह हो हो कर लगातार नष्ट होता रहता है, और अंत में ईश्वर में ही विलीन हो जाता है, और शेष रूप से ईश्वर ही सत रूप में शेष रहता है. अर्थात जो कुछ है जड़ है, यह भी ईश्वर का ही अंश है, यह जो कुछ चेतन तत्त्व है है, वही सत चेतन ईश्वर का ही अंश है. केवल ईश्वर ही सत है

यही ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय का द्वितीय सूत्र " जन्माद्यस्य यतः" के एक स्पष्टीकरण है.
यही ज्ञान ईश्वर ने चतुश्लोकी भगवत में बतायी है "अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परम्" का भी एक स्पष्टीकरण है .

ब्रह्मज्ञानी तत्त्वज्ञानी इस सृष्टि और ईश्वर ब्रह्म को इसी ज्ञान नेत्र अथवा दृष्टि के द्वारा देखता है.